विषदूक—महाराज! आप ऐसा न कीजिये, यह बात सुनकर मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है.

सुदर्शन—भाई! मेरा हृदय तो पहिलेही विदीर्ण हो चुका है, यह कह, खूंटीसे कटार उतारता है, और विदूषक उच्चस्वरसे पुकारता है, दौड़ियो! दौड़ियो!! राजकुमार कटार खाये मरेजाते है.

(सुलोचनका प्रवेश).

सुलोच०—महाराजकी जय हो!

सुदर्शन—(उठकर) मित्र, आओ! आओ! कहो क्या किया?

सुलोच०—मंत्र सिद्ध होगया, परमेश्वर चाहे तो कार्य सिद्ध होगा, देवताने मुझसे कहा, तुम्हारे मित्रको राजकुमारी-का दर्शन अवश्य होगा.

सुदर्शन—इससे अधिक और क्या बात होगी, मैं तो दिनरात परमेश्वरसे यही मनाता हूं कि, कब उस चंद्रमुखीका दर्शन हो. फिर क्या ढीलढाल है?

सुलोच०—ढीलढाल क्या होगी! परमेश्वरकी दयासे घर बैठेही सब काम पूरा हुआ जाता है.

सुदर्शन—कैसे?

सुलोच०—अब कोई क्षणमात्रमें उस सुनयनीका संदेश लिये आता है?

सुदर्शन—उसका क्या प्रयोजन जो संदेशा भेजेगी,

मैं झूंठी वातोंसे प्रसन्न नहीं होता, जो तुमको मेरेसाथ नहीं चलना तो निषेध क्यौं नहीं करते, इन झूंठी बातोंसे क्या काम चला, तुम्हारी वह कहलावत है—"पहिले आगल गायकै दौरत पानी लैन"

सुलोच०—महाराज! मेरी क्या सामर्थ्य है, जो आपके सन्मुख मिथ्या वचन कहूं; अव आधीरातका समय है, दोपहर और धैर्य धारण करो, प्रातःकाल निःसन्देह आपके साथ चलूंगा.

(नेपथ्यमें वीणाका शब्द होता है.)

सुदर्शन—(अकस्मात् चकित होकर) हे मित्र! यह वीणाकासा शब्द कहांसे सुनाई आता है, यह मनोहर शब्द मेरे मनको मोह लेता है, अब मेरा मन स्थिर नहीं. अब कुशल चाहो तो शीघ्र मुझको वहां लेचलो, जहांसे यह मधुर ध्वनि सुनाई देती है, हाय, यह शब्द तो मेरे हृदयमें बाणसे मारता है, और वारम्वार यही पुकारता है, कि शीघ्र आ, शीघ्र आ, यह वीणा नहीं है, यह तो मोहनीमंत्र विदित होता है, जो वारम्वार मेरे मनको आकर्षण करता है; अब शीघ्र मेरेसंग चलकर मुझको वीणा सुनवा दो, नहीं तो मेरे प्राणान्त होनेवाले हैं, और मुझको यह भी विदित होता है, कि उस मनमोहनीने मेरा मन दुःखित देख नारदके हाथ संदेशा न भेजा हो; वा नारदसे भी अधिक वीणा बजानेवाला, उस मृगलोचनीके यहां कोई हो.

सुलोच०—हे मित्र! आपका चित्त स्थिर नहीं, अभी लावण्यवती लावण्यवती कर रहे थे, अभी वीणा वीणा करनेलगे, कलको और कोई अद्भुत चरित्र देखोगे, उधरको आकांक्षी होजाओगे, और जो लावण्यवती संदेशा भेजती तो वह दूत आपके स्थानपर आता, वनमें वीणा क्यौं बजाता, आप किस भ्रमजालमें पड़े हो, संसारमें अनेकप्रकारके मनुष्य हैं; कोई गाता है, कोई बजाता है, कोई रोता है, कोई हँसता है; अपने अपने व्यसनोंमें सब मतवाले हैं.

सुदर्शन—जब सबही अपने अपने ढंगमें मतवाले हैं, तो मैं क्या जगतसे निराला हूं.

सुलोच०—आप जगतसे निराले तो नहीं, परन्तु इन बातोंसे कोई प्रेमी नहीं कहलाता, पूरा प्रेमी तो वह पुरुष होता है, जो परमेस्वरका भजन करे, और मध्यमप्रेमी वह है, जो जिस वस्तुको ग्रहण करले, भली हो वा बुरी, फिर अन्तको चित्त न भटकावै, और यह बात तो अत्यन्त कनिष्ठ है. कभी आकाश कभी पाताल.

सुदर्शन—मैं तो आकाशमें न पातालमें, मेरे जीका हाल मेराही जी जानता है. अब जो मेरा हित चाहते हो तो शीघ्र मेरे साथ चलो, और सिखाने बुझानेकी इस समय कोई बात नहीं.

सुलोच०—मित्र! कहां कहांको तुम्हारे साथ चलूं?

दोहा.

एक दुखसे छूटे नहीं, दूजो प्रगटो आन,
कहां कहां फिरती फिरै, एक अकेली जान ॥

देखो, मेरा कहना मानो, वीणा मत सुनो, और जो वीणा सुनोगे तो अत्यन्त खेद उठाना पड़ैगा, इससे चुप रहना अच्छा है. क्योंकि लावण्यवतीका दुःख तो अबतक निवारणही नहीं हुआ और दूसरा भार शिरपर धारण करलेते हो यह बात बुद्धिवानोंकी बुद्धिसे कोसो दूर है, तुमने नहीं सुना. यदि कोई मनुष्य कुमार्गमें चरण धरता है, वह विनाही मृत्यु मरता है.

चौपाई.

"जो कुपन्थपग धरत खगेशा, रहत बुद्धिवल नहिं लवलेशा"

इसलिये मैं बारम्बार आपको समझाता हूं, कि यह राजयक्ष्मा रोग है, इससे बचनाही भला है.

सुदर्शन—भाई ! अब तो यह रोग लगही गया, प्राण रहैं चाहे जायँ, वीणा अवश्य सुनूंगा.

सुलोच०—(आपहीआप)—

दोहा.

"जैसी हो होतव्यता, वैसी उपजै बुद्धि,
होनहार हिरदय बसै, बिसर जाय सब सुद्धि."

(प्रगट) आपको यही हठ है तो, अपना और मेरा घोड़ा

मगवालो, मैं भी उपस्थित हूं, धनुषबाण कांधेपर धरलो, बिछुवा, कटारी कटिसे कसलो, बरछी भाला हाथमें लेलो, न जानिये किस समय किससे काम पड़जाय, इसलिये वीरवेष बनाना उचित है, आगे आगे मेरा घोड़ा होगा और मेरे पीछे पीछे आप आपना अश्व करलेना.

सुदर्शन—हे मित्र ! मैंने अस्त्रशस्त्रसज वीरवेष धारण करलिया, परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि चन्दनबागकी ओ-रसे बीणाका शब्द सुनाई देता है, और यह भी उसके ल-क्षणोंसे प्रगट होता है कि, कोई बिरहिनी बाला वीणा बजाती है, परन्तु किस किस ढंगसे वीणामें रसीले रसीले स्वर निकाल रही है. मानो कामीजनोंके मनके मोहनेको मोहका जाल डाल रही है.

सुलोच०—चन्दनबागकी ओरसे तो यह शब्द सुनाई नहीं आता, प्रथम कुसुमारण्य और मालतीलताकी ओर चलो.

सुदर्शन—मित्र ! मार्गमें विचित्रबाग, और केशरभ-वन पड़ैगा; वहांभी ढूंढ़ते चलो. (दोनों जाते हैं और यवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननाम नाटके प्रथमो गर्भांकः समाप्तः.

द्वितीय भाग.

स्थान जङ्गल.

(अंधेरी रात है, राजकुमार और मंत्री फिरते हैं.)

सुदर्शन—मित्र! यहां तो वीणाका चिन्ह भी नहीं, अब मदनवनवाटिका और चम्पारण्यकी ओर ढूंढ़लें, फिर गन्धराज्ञविपिनको चलेंगे; परमेश्वर चाहे तो वहां अवश्य पता लग जायगा.

सुलोच०—मैं तो आपका आज्ञाकारी ठहरा, जो जो कहोगे सब करूंगा.

सुदर्शन—चलो भाई! आनन्दमयी पुष्पवाटिका और देखलें, परन्तु बड़े आश्चर्यकी बात है; हम बन बन मारे मारे फिरैं और उस निर्दईको हमारी तनक भी दया नहीं.

सुलोच०—हे प्यारे! वह देखो, मौलश्रीके वृक्षके निकट, कोई बाला योगियावेष धारण किये वीणा बजा रही है, अब आप प्रथम तो सब शोकसंतापको त्याग योगिनीका दर्शन करिये. इसके उपरान्त आनन्दसे वीणा सुनिये.

सुदर्शन—हा! परमात्मा किसीपर विपत्ति न डाले, देखिये. मुझ अभागेके भाग्यसे वीणा बजनी भी बन्द होगई हे विधाता! ऐसा मैंने तेरा क्या अपराध किया है, जो मुझे ऐसे ऐसे कठिन दुःख दिखाता है.

सुलोच०—भाई विधाताका कुछ दोष नहीं, यह सब तुम्हारेही कर्मोंका दोष है.

सुदर्शन—यह मुझको भलीभांति विदित है! परन्तु अब आप इस योगनको समझाकर एकबार वीणा फिर सुनवादो, जो मेरे मनको धैर्य हो, हाय! इस योगननें वीणा सुनाकर कुछ ऐसा टोना करदिया है कि, एक पलको भी कल नहीं पड़ती न जानिये मेरे भाग्यमें क्या लिखा है?

(योगनके निकट सुदर्शन और सुलोचनका प्रवेश.)

सुलोच०—योगनजी आदेश!!

योगन०—परमात्मा आनन्द रक्खे।

सुलोच०—आप वीणा बजानेमें तो अद्वितीयही है, ऐसा वीणा हमने आज तक नहीं सुना, संमोहन कहें, वा टोना कहें, जो बलात्कार चित्तको वशीकरण कर आकर्षण करता है, प्रथम तो मुझको यही अनुमान था कि, नारद मुनिनेही हमारे नगरमें प्रवेश किया है, परन्तु तुम्हारा दर्शन करनेसे परमेश्वरको अनेक अनेक धन्यवाद देता हूं, कि हे विधाता! तूने ऐसे ऐसे मनुष्य भी पृथ्वीपर उत्पन्न किये हैं.

योगन०—यह सब गुरुमहाराजका प्रताप है, और परमात्माको सब सामर्थ्य है.

सुलोच०—(हाथ जोड़कर) कुछ मेरी आपसे प्रार्थना है!

योगन०—क्या?

सुलोच०—यह मेरा मित्र राजकुमार, तुम्हारी वीणाकी

ध्वनिपर मोहित होगया है, इसलिये मैं इसको तुम्हारे पास लाया हूं, और मुझको आशा है कि, तुम वीणा सुनाकर इसको प्रसन्न करोगी, सो अब आपसे बिनयपूर्वक यह निवेदन है, कि, इस दीनपर दया करके, इसे वीणा सुनादो, और जो रागिनी प्रथम गाई थी. वही रागिनी कृपाकरके वीणामें फिर गादो, इस राजकुमारका जीवन, मरण तुम्हारे हाथ है; जो तुम वीणा न बजाओगी तो यह राजकुमार प्राणघात कर मरजायगा.

योगन०—क्या हम विधाता हैं ? जो जीवन, मरण हमारे हाथ है ? क्या हम तुम्हारी अनुचर हैं ! जो तुम्हारे कहनेसे वीणा बजावें ? क्या हम वेश्या हैं ! जो हमारे ऊपर तुम्हारा मित्र मोहित होगया ? हम योगी अवधूत लोगोंको इस चर्चासे क्या प्रजोजन, कोई मरो कोई जियो, तुम किस मूर्खके बहकानेसे मूर्ख बनगये; जो आधी रातको वनोंमें मारे मारे फिरते हो, तुमको अपने प्राणोंका किंचिन्मात्र भी भय नहीं, जाओ, अपने घर बैठो, कैसी बीणा सुनते फिरते हो; और जो अधिक तीन पांच करोगे तो शाप देदूंगी, क्षणभरमें जलकर भस्म हो जाओगे.

सुलोच०—तुम बड़ी निर्दई हो! तुम्हारे हृदयमें कुछ भी दया नहीं, यह राजकुमार बारम्बार आपकी विनय करता है, और चरणोंमें शिर धरता है, और नेत्रोंसे नीर धाराप्रवाह गंगा, यमुनाकी भांति चला जाता है, और बातबातमें

यही रटना है; (कि हाय बीनवाली हाय बीनवाली) और तुम इसकी ओरको दृष्टि उठाकर भी नहीं देखती; बड़े आश्चर्यकी बात है, पहिले तो वीणा बजाकर इसका चित्त फांसा, और पीछे झांसा, यह बात अच्छी नहीं, तुमविना प्रयोजन राजकुमारके प्राणोंकी ग्राहक होती हो; देखो, जो मेरा मित्र मरगया तो खड्गसे इसी समय तुम्हारा शिर काटलूंगा. और अन्तको अपना शिर काट राजकुमारकी भेंट करदूंगा.

योगन०—मरजाओगे तो क्या किसीके ऊपर उपकार करोगे, हम योगन् तुम्हारे धमकानेकी नहीं.

सुलोच०—यह तो हम भलीभांति जानते हैं. तुम हमारे धमकानेकी नहीं, परन्तु दीनपर दया करनी सत्पुरुषोंका काम है.

योगन०—बस तुम मेरे सन्मुखसे चले जाओ, तुम्हारे साथ दया और वेद ये दोनों इकसार हैं.

सुदर्शन—(कानसे कान लगाकर) भाई ! योगनको क्रुद्ध न करो, जो यह कुपित होजायगी तो वीणा न सुनावेगी, और विनावीणा सुने मेरा जीना कहां, अब तुमको उचित है कि, इसकी प्रार्थना करो जो यह प्रसन्न हो.

सुलोच०—जैसे आपकी इच्छा हो ! मैं तो आपका दास ठहरा, मुझको किसी बातसे निषेध नहीं.

सुदर्शन—हे योगनजी ! तुम प्रवीण होकर हम दीन-

लोगोंपर इतना क्रोध ! आपकी क्रोधाग्निके सहनेकी हमलोगोंको सामर्थ्य कहां.

योगन०—अच्छा मैं जाती हूं.

सुदर्शन—तो मेरे प्राण भी आपके संग हैं.

योगन०—तुम्हारे प्राण शरीरमें ऐसे भारी हैं ?

सुदर्शन—भारी नहीं थे, परन्तु तुम्हारी वीणाने भारी करदिये, अब बारंबार यही जीमें आता है, कि, कटारी मार मरजाऊँ.

योगन०—परमेश्वरके लिये तुम आपने प्राण मत खोओ. मैं वीणा सुनाये देती हूं. क्यौं इतना कष्ट उठाते हो, और मुझे निर्दई बताते हो, परन्तु यह और बतादो, तुम्हारे पिताका क्या नाम है, और तुम्हारा क्या नाम है और तुम्हारे मित्रका क्या नाम है ?

सुदर्शन—इस बातसे आपका क्या अभिप्राय ?

योगन०—बतानेमें आपकी क्या हानि है.

सुलोच०—नाम बतानेमें बहुत बड़ी हानि है, सौ शत्रु, सौ मित्र.

योगन०—मैं नाम इसलिये बूझती हूं, कि, तुम्हारी भोली भोली छाबि देखकर, मेरे मनमें दया आती है, वीणा सुनतेही घरवार त्याग, शरीरमें भस्म मल, योगीका वेष बनाना पड़ैगा.

सुलोच०—इस बातका हमको कुछ सन्देह नहीं, और

यह भी हमको विदित होता है कि, हमारे ऊपर आपकी कृपादृष्टि है, और तुम हमारी शुभचिन्तक हो, इसलिये हम अपना नाम और ग्राम भी तुमको बताये देते हैं, विजयनगरका राजा विजयसिंह उसके यह पुत्र हैं, और इनका नाम सुदर्शनकुमार है, और मेरा नाम सुलोचन है.

योगन०—ओ सावधान हो कर बैठो और वीणा सुनो.

राग सोरठ.

बुरो है बुरो बिरहको रोग ॥ ध्रु० ॥
दाता करेलगै नहिं काहू, पियबिछरनको सोग ॥ १ ॥
स्वप्न देख लावण्यवतीनें, त्यागो सुख अरु भोग ॥
पिय पियरटत घुटत मनही मन, समझावत सब लोग॥२॥
सुन सुन बोल मोर कोकिलके, दूनो बढ़त वियोग ॥
शालिग्राम कवन दिन ह्वै है, प्रीतम सों संयोग ॥३॥

सुदर्शन—धन्य है ! धन्य है !! आपके कर्तव्यको, मेरा मुख आपकी प्रशंसा करनेयोग्य नहीं, और यह सब काम आपहीके हाथ है.

योगन०—आपने अपना काम मेरे हाथ कैसे समझा.

सुदर्शन—आप सर्वगुणसम्पन्न, और चौदह विद्यानिधान हैं.

योगन०—क्या अपना गुण दिखाकर, हमें किसीको रिझाना है ?

सुदर्शन—परमेश्वरने आपको विद्यावान बनाया है,

और विद्याके आधीन सब जगत है; विद्याका फल यही है: जो दूसरेका कार्य बने.

योगन०—तुम्हारा कार्य मुझसे किसीप्रकार न होगा.

सुदर्शन—(नेत्रोंमें नीर भरकर) क्यौं ?

योगन०—यह संसारी झगड़े कौन गांठ बांधै, हमको अपनीही पूजासे सावकाश नहीं, तुमने वीणा सुनानेको कहा था, सो वीणा तुमको सुना दिया.

सुदर्शन—यह तो तुमने मेरे संग बड़ा उपकार किया, परन्तु मेरी एक और प्रार्थना है, कृपाकरके उसे भी सुन लीजिये.

योगन०—सुनोजी ! साधुओंका बहुत सताना अच्छा नहीं, अब तुमने वीणा सुनलिया, अब जाओ.

सुदर्शन—(मन मलिन करके)अब मैं कहां जाऊं, मेरा मन तो तुम्हारे वीणाने मोह लिया.

योगन०—जो वीणा सुननेकी इच्छा हो, तो और सुना दूं.

सुदर्शन—यह आपका अत्यन्त अनुग्रह है, परन्तु मेरी कुछ और भी प्रार्थना है.

योगन०—क्या ?

सुदर्शन—मुझे कहते भय लगता है.

योगन०—कुछ भय मत करो, अपना मनोरथ कहो.

सुदर्शन—मैं भलीभांति जानता हूं, मेरे कामकी करता धरता तुम भी हो.

योगन॰—यह तुमने कैसे जाना.

सुदर्शन—आपनें जो रागिनी गाई, तो प्रगट हुआ, यह सब कौतुक आपहीका है और आपहीके हाथ मेरा जीवन, मृत्यु है, इसलिये मैं बारम्बार आपके चरणोंमें शिर धरता हूं, जैसे बनै वैसे लावण्यवतीका दर्शन करा दो.

योगन॰—हे राजकुमार! आप घबराओ मत, मैं तुमको राजकुमारीके मिलनेका यत्न बताती हूं! परन्तु मुझको यह बात मुखसे निकालनेको संकोच होता है.

सुदर्शन—योगनजी! यह समय लज्जा करनेका नहीं, शीघ्र प्राणप्यारीके मिलनेका उपाय बताओ.

योगन॰—अच्छा, तो अस्त्रवस्त्र उतार धरो, और योगीका वेष बनालो, और इस इन्दुसे मुखारविन्दपर भस्म रमालो, और अपने इस मित्रके भी गेरुवा वस्त्र रंगाकर, अपने-संग लेलो, और मेरे साथ चल दो, परमेश्वरने चाहा तो लावण्यवतीका दर्शन हो जायगा.

सुदर्शन—मेरे ऊपर तुम्हारी बड़ी दया होगी.

योगन॰—अब मैं ठहर नहीं सकती, शीघ्र यात्राका सामान करलो.

सुदर्शन—हे सुलोचन! अब सब काम परमेश्वरने पूरे करदिये, मेरे लिये गेरुवा वस्त्र रंगादो, अब मैं योगी बन,

इस योगनके साथ, प्यारीके देशको जाऊंगा. और प्राणप्यारीके द्वारपर अलख जगाऊंगा, अब तुम हमारे ऊपर कृपादृष्टि रखना, आज मैं सबसे अलग होता हूं.

सुलोच०—जो आप योगी बनकर, योगनके संग चलदिये तो मेरे प्राण कहां, प्यारे यह प्राण तो तुम्हारेही संग हैं, जहां आप वहां मैं.

सुदर्शन—मुझपर तो विधाताका कोप है, तुम क्यौं वृथा विपत्तिमें पड़ते हो.

सुलोच०—आप विपत्ति कहैं, मैं तो आपकेसंग विपत्तिको भी संपत्तिही समझता हूं, मैं आपके चरणोंसे एक क्षणको भी अलग नहीं हो सकता.

(सुदर्शन और सुलोचन योगीका वेष बनाते हैं; और यवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटके शालिग्रामवैश्यकृते द्वितीयोंऽकः समाप्तः ।

तृतीय भाग.

स्थान मार्ग.

(सुदर्शन और सुलोचन, योगनके संग जाते हैं, और मार्गमें बड़े बड़े बन और पहाड़ दृष्टि आते हैं.).

सुदर्शन—हे योगन ! यह तो महाकठिन मार्ग है, कै-

से २ गम्भीर वन, नदी और ऊंचे २ पहाड़ दृष्टि आते हैं; जिनपर सिंह दहाड़ रहे हैं, और हाथी चिंघाड़ रहे हैं, जिनका भयानक शब्द सुन सुनकर, मेरा हृदय कम्पायमान होता है, ऋक्ष और वानर मेरी ओरको घूर घूर दूरहीसे घुड़की बताते हैं, (कुछ दूर आगे बढ़कर) अब तो ऐसा महागम्भीर वन आगया, चारों ओर अग्निसी जल रही है; जलका कहीं चिन्ह दृष्टि नहीं आता, तृष्णाके मारे प्राणान्त हुआ जाता है.

योगन०—अभी आपने क्या देखा है, आगे बड़े बड़े भयानक और विकट वन कोसों लौं आवेंगे, जहां सहस्रों भूत पिशाचिनी, योगिनी, हाथोंमें खप्पर लिये, मदका प्याला पिये, मार मार पकड़ पकड़ पुकारती फिरती हैं, वहां क्या करोगे.

सुदर्शन—मेरा मित्र सुलोचन सब यत्न कर लेगा.

योगन०—फिर यहां क्यों इतने भयभीत होते हो ?

सुदर्शन—तृषाके मारे जीव घबराया जाता है.

योगन०—अब निकटही एक सरोवर आता है, जल पीकर तृषा निवारण करना.

सुदर्शन—कितनी दूर है ?

योगन०—वह जो ऊंचे ऊंचे चीड़के वृक्ष दीख रहे हैं.

सुदर्शन—हे योगन ? यह तो बड़ा मनोहर और रमणीक स्थान है, इस सरोवरका तो अत्यन्त स्वच्छ और शी-

तल जल है, दर्शनहीसे सब तृषा निवारण होगई, कैसे २ सुन्दर घाट और श्रेणी बनी हैं, चारों ओर पुष्पोद्यानकी शोभा औरही दिखाई दे रही है, कैसी २ सुन्दर लतायें वृक्षोंसे हिलीमिली शोभा दे रही हैं, मानो मित्र मित्र मिल परस्पर मनको आनन्द कर २ हर्ष बढ़ा रहे हैं, और कैसे २ अनुपम वरण २ के पुष्प वृक्षोंपर फूले फले दृष्टि आते हैं, मानो मनके मोल लेनेको सुगन्धरूपी दलाल चले आते हैं, अब यहां दो चार दिन वास करनेको मेरा चित्त चाहता है, जो तुम्हारी आज्ञा हो तो अपने मित्र सुलोचनसे भी परामर्श करलूं.

योगन०—हे राजकुमार ! यह पुष्पोद्यान वास करनेके योग्य नहीं, यहां अनेक भांतिके दैत्य, दानव भ्रमण-करते फिरते हैं, जो कीसीसे समागम होगया तो न जानिये क्या उपद्रव प्रगट होजाय.

सुदर्शन०—मार्गके चलनेसे बहुत परिश्रम हुआ है, अब तो दो दिन यहां अवश्य निवास करूंगा, जब इस शरीरका परिश्रम दूर होजायगा तो आगेको पांव धरूंगा.

सुलोच०—भाई ! यह योगनजी भूत, भविष्य, वर्तमान, तीनों कालका वृत्तान्त अपने योगबलसे सब जान सकती है, जिस ठौरको यह बुरा कहैं फिर वहां रहनेका क्या प्रयोजन ! चलो; आगे चलकर ठहरैंगे.

सुदर्शन—मित्र ! अब तो मुझसे चला नहीं जाता, औं-

खोंमें निद्रा छाय रही है, एक एक पग धरना भारी है.

सुलोच०—जो आपकी इच्छा.

सुदर्शन—जो तुम्हारी आज्ञा हो तो थोड़ी देरको उपवनमें जाय हृदयको शीतल और शरीरका श्रम दूर कर आऊं.

सुलोच०—जो आपकी इच्छा.

सुदर्शन—तो जाता हूं.

सुलोच०—जो आपकी इच्छा.

(सुदर्शन बागमें जाता है और दुर्मुख नाम राक्षस उसको उठाकर ले जाता है.)

सुलोच०—सुदर्शनको गये बड़ा विलम्ब हुआ, मुझको अत्यन्त सन्देह है, न जानिये इतना विलम्ब क्यौं किया.

योगन०—अभी किशोर अवस्था है, कोई नवीन वस्तु दृष्टि आगई होगी, उसको देख रहे होंगे.

सुलोच०—यह बात तो आपकी सब सत्य है, तौ भी क्या है जो कुछ लड़कपन उनके मनमें आ गया हो, किसीसे लड़ाई दंगा कर बैठे हों, इसलिये मेरे जीमें आता है, मैं जाकर राजकुमारको लिवा लाऊं.

योगन०—आपकी इच्छा, जाओ परन्तु मुझसे अकेला न रहा जायगा, इस वनमें, सुदर्शनके जानेसे मुझको अत्यन्त भय लगने लगा है.

सुलोच०—तुम भी मेरेसाथ चलो.

(पुष्पोद्यानमें सुलोचन और योगनका प्रवेश.)

सुलोच०—(चारों ओरको दृष्टि दौड़ाता है, और सुदर्शनको नहीं देखता, घबराकर उच्चस्वरसे पुकारता है.) अरे मित्र! सुदर्शन! हे मित्र सुदर्शन!! कहां हो, किस ओर हो. बोलते नहीं (जब सुदर्शन न बोला तो लगा इधर उधर घूमने;) हे मित्र सुदर्शन! हे मित्र सुदर्शन!! कहां हो, किस ओर हो.

योगन०—महाराज! आप घबराओ मत, आगे बढ़कर देखो.

सुलोच०—मुझे तो कहीं दृष्टि नहीं आता, और आगे ढूंढ़ता हूं. हे मित्र! मुझे अकेला छोड़कर कहां चला गया, तुमविना मेरा चित्त व्याकुल हुआ जाता है, यह कैसे सुन्दर पुष्प खिल रहे हैं, इनकी शोभा क्यों नहीं देखता, मेरा गद्गद् कण्ठ देख यह मोर मेरी ओरसे तुझे पुकार रहे हैं, तू इनकी रसीली और मनोहर वाणी क्यों नहीं सुनता. (आकाशकी ओरको देखकर.) अरे पापी, दुराचारी, चाण्डाल, खडा रह, खड़ा रह, हमारे प्यारे मित्रको लिये कहां भागा जाता है. सावधान हो. मैं अभी बाणोंके मारे तेरा तन छिन्न भिन्न किये डालता हूं, क्या तू पहाड़के शिखरसे भागकर, आकाशमें जा, मुझको धनुषवाण दिखाकर धमकाता है, क्या तेरी इच्छा मुझसे युद्ध करनेकी है.

योगन०—महाराज! आप क्या कहते हो, कहां है राक्षस, और कहां है सुदर्शन? आपको क्या होगया, जो ब-

हकी २ बातें करते हो? घबराओ मत, सुदर्शन मिला जाता है.

सुलोच०—(करुणासहित सावधान होकर) अरे, मैं बड़ा मूर्ख हूं! कहां है राक्षस? यह तो सम्पूर्ण मेरीही भूल है, जिसको मैं राक्षस अनुमान करता हूं. वह तो काली काली घटा है, और जिसको मैंने धनुष समझा, वह आकाशमें धनुष चमक रहा है, और यह बाण नहीं हैं यह तो बुन्दाधार है, और जिसको मैंने आपना मित्र सुदर्शन जाना था, वह जी जलानेवाली चपलाकी चमक निकली, यह तो मेरे प्यारेकी पासंग भी नहीं है, मैंने बड़ा धोखा खाया, (मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरता है, और ठण्ढे ठण्ढे स्वास भरकर फिर उठता है) जब यह नहीं, तो फिर वह राजकुमार कहां गया? कहां ढूंढू? हाय! इस समय जो मुझे उस प्यारे मित्रका वियोग सता रहा है, वह मेराही जी जानता है.

योगन०—महाराज, सत्य है. जिसपै वीतती है वही जानता है, दूसरा नहीं जानसकता!

सुलोच०—(इधर उधर देखकर.) हरे हरे! यह हरे हरे पक्षी कौन हैं? जो हरे हरे खेतोंमें आनन्द कर रहे हैं.

योगन०—इनको आप नहीं जानते, यह मोर हैं, जो पुरवाई पवनकी झकोर और बादरोंकी घनघोर घटा देख, कण्ठ मोर २ पक्ष उठाय २ मग्न हो हो कर, धूपकालका अन्त, और वर्षाका आरम्भ देख, जो मयूर, मयूरीगण, मधुर २

स्वरोंसे बोल २ और नृत्य कर २ कामीजनोंपर मोहनी डालते हैं.

सुलोच०—तो इनसे बूझूं, जो कहीं इनको मिला हो.

योगन०—अच्छा महाराज ! इनसे भी बूझ देखो, यह भी वनवासी हैं ?

सुलोच०—हे मित्रो ! तुम कुछ मेरे मित्रका भी समाचार जानते हो ?

राग सोरठ.

मेरी विनय सुनहु वन मोरा, ।
बन बन फिरत रहत तुम निशिदिन, भेद लखत चहुं ओरा ॥ १ ॥
तुम कहुं देख्यो मित्र हमारो, वय किशोर रँग गोरा ।
शीघ्र कहो कहां गयो मित्र मम, मानहु मोर निहोरा॥२॥
जन्म २ मैं दास रहूंगो, गुण नहिं भूलूं तोरा ।
जो कोउ मोरा सखा मिलावै, सोई मीत है मोरा ॥ ३ ॥
सब पक्षिनको आज विपिनमें, मैंने आन बटोरा ।
चातकसे कुछ पता लगत है, मुझको थोरा थोरा ॥ ४ ॥
हाय ! बन्धु मोहिं छांडि अकेलो, कित गयो चोरी चोरा ।
शालिग्राम तुम्हारे कारण, दशदिश दीन्ह ढंढोरा ॥ ५ ॥

(जब वह अभिमानी गर्व भरे न बोले)

हां भाई ! तुम काहेको बोलोगे, तुम्हारे मित्र तुम्हारेसंग

हैं, तुमको क्या सोच है ? यह तो मैंही वियोगी हूं, जो योगीका वेष बनाये, वन २ भटकता फिरता हूं. (आपहीआप) हाय दई तेरी गति, किसी समयमें भी तो प्रधानका पुत्र था, अब कोई मेरी बात भी नहीं बूझता, हाय ! जिससे बोलूं वह चुप साध लेता है, अरे मन ! क्यों पश्चात्ताप करता है.

राग बिहाग.

विपतिमें कोउ न साथी होय ।
बात बातमें प्राण देत जे, जानै कित गये सोय ॥ १ ॥
विपति परत जब चन्द्र सूर्यपर, दुख न बटावत कोय ।
दिति और सिन्धु मौन बन बैठे, जो जग सकत डुबोय २
बन बन मारे फिरे पाण्डुसुत, समय वितायो रोय ।
सिरीकृष्णसे जिनके प्रियतम, कष्ट सके नहिं खोय ॥३॥
जिनके घरमें माल जगतको, डारदिये सब ढोय ।
ते अब करत दूरते दुर दुर, देत तनक नहिं तोय ॥ ४ ॥
तनके मीत प्रीति सब त्यागत, तात मात और जोय ।
शालिग्राम काम आवत हैं, पापपुण्यही होय ॥ ५ ॥

छोड़ इनको (प्रगट) योगनजी ! चलो यहांसे, आगे और किसीसे पूँछेंगे.

योगन०—महाराज ! यह नीलकण्ठ बैठे हैं, जो परमेश्वरके सच्चे भक्त हैं, इनसे बूझो.

सुलोच०— (परिक्रमा देकर)

चौपाई.

ऐहो नीलकण्ठ बड़भागी, रामपदारविन्दअनुरागी।

दोहा.

पग पग वन देख्यो परो, हे खगराज तुम्हार।
कहूं योगिया वेषमें, देख्यो राजकुमार ॥ १ ॥
कै कोउ राक्षस गगनपथ, लैगयो ताहि उड़ाय।
जो तुमको कछु विदित हो, दीजै मोहिं बताय ॥ २ ॥
जन्म जन्म गुण आपका, नहिं भूलूं खगराज।
जो तुम मेरे मित्रको, पता बतावहु आज ॥ ३ ॥

क्योंजी! कुछ मेरी बातका उत्तर न दिया? तुमतो रामचन्द्रके पूर्ण प्रेमी हो, सबको एक समान जानते हो, हाँ, ठीक है! अब मैं जानगया, तुमने मौन साधा है, आप आपना व्रतभंग न कीजिये, मैं और किसीसे बुझलूंगा, सत्य है; भाग्यहीनको पग पगपर कष्ट उठाना पड़ता है.

योगन०—देखो महाराज! यह कोयल शीतकालका अन्त, और वसन्त ऋतुका आगमन जान, मदमाती होकर आमके वृक्षपर बैठी, कैसे मधुरस्वरसे बोल कामीजनोंके हृदयोंको छोल रहे हैं, परन्तु और पक्षियोंसे यह जाति बहुत चतुर होती है, मेरी इच्छा है, इससे कुछ पूँछो.

सुलोच०—योगनजी! यह बात तुमने ठीक कही, यह जाति बड़ी प्रवीण है, परन्तु बिनाहीं पूँछे इसकी वाणी

हृदयको विदीर्ण किये डालती है, जो यह बोलनेसे थँभे तो कुछ पूँछूं,

राग बिहाग.

कोयलिया कठिन बोल मति बोलै.
वन वन घूमत फिरत रात दिन, द्रुमन द्रुमनपर डोलै॥१॥
शशिसम वदन मनोहर मूरति, इत ह्वै कोउ गयो लै ।
पता बतायदेहु प्रियतमको जो, भयो नयनन ओलै ॥२॥
तनमनधन नौछावर करि हौं, अरु जो चहिये सो लै ।
शालिग्राम किसलिये अपने, भेद न मनको खोलै ॥ ३ ॥

हे कोयल ! कामी पुरुष तुझे कामदेवकी वशीठी कहते हैं, सत्कार और तिरस्कारके विषय तू चतुर और अमोघास्त्र है, तुझे उचित है कि, उस मेरे मित्रको मेरे नेत्रोंके सन्मुख ला वा उसके निकट मुझको ले चल.

दोहा.

सदा वियोगी जननके, सारत हो तुम काज ।
काज कृपाकर सारिये, मेरोहू कछु आज ॥

(आपही आप) इतनी विनयपर भी यह उत्तर नहीं देती, धन्य है विधाता, इनको अपनी वाणीका बड़ा अभिमान है, क्यों न हो, जिसको सुनकर सैकड़ों विरही मतवाले हो, शिरमें छार डालते फिरते हैं. (योगनसे) देखो यह अपने काममें कैसी चतुर है, कि दूसरेकी ओरको ध्यान भी नहीं करती. इसको वही कहावत ठीक है, औरका कष्ट कैसाही

प्रबल और संतप्त हो, उसे प्राणी सूक्ष्म और शीतलही समझते हैं, जैसे मुझ आपत्तिग्रस्तकी प्रार्थनाको मेट, यह बधिर और अन्धी मदमाती कोयल अपने काममें तत्पर है, मेरे मित्रके समाचार कहनेमें मौनकर, मुँह छिपाती है. जाने दो दूर करो, किसी औरसे पूँछेंगे.

योगन०—महाराज ! यह जो पक्षी भोले भोले नदीके किनारे फिर रहे हैं, इनसे बूझो, यह ठीक ठीक पता बतावेंगे. कदाचित् सुदर्शन यहां जल पीने आया हो, और इन्होने देखा हो.

सुलोच०—इनको तो मैं भली भांति जानता हूं, इनसे भी पूँछ देखता हूं.

अहो रथांग ! आपका नाम चक्रवाक है, फिर अवाक होनेका क्या कारण ? और तुम्हारे नेत्र भी रक्त वर्ण हो रहे हैं, कोई तुम्हारा प्यारा तो तुमसे नहीं बिछड़ गया ? अहाहाहा ! हां मैं भूला हूं. तुमतो सदैव कालके वियोगी हो. भाई ! ऐसाही वियोगी मैं भी हूं, मेरा भी एक मित्र मुझसे अलग होगया है, उसके चिन्ह भी मैं तुम्हें बताये देता हूं, कदाचित् तुमने देखा हो, किशोर अवस्था, गौरवर्ण, चंचल चित्त, कमलदललोचन, मदनमदमोचन, जटाबढ़ाये, योगियावेष बनाये, अपने मित्रके वियोगमें मतवालासा है, उसीके शोक सन्तापमें मेरी यह गति है, चलो एकसे दो तो हुए, क्यों कि, दुखियाका दुःख दुखियाही भलीभांति जानता है, अब यह ब-

ताओ, तुमने कहीं मेरे मित्रको भी देखा है? हाय! अब यह भी मेरी बातका उत्तर नहीं देते; विदित होता है कि, यह भी विरही विरहके समुद्रमें डूब रहे हैं, इसीसे इनमें बोलनेकी सामर्थ्य नहीं.

योगन०—महाराज! यह नहीं बतावेंगे, चलो. इमहीं तुम चलकर कहीं ढूंढैं.

सुलोच०—(आगे बढ़कर) हे योगन! प्यारेके चरणोंका चिन्ह तो दिखाई देता है, इससे प्रगट होता है कि, वह इसी मार्ग होकर, प्यारीके विरहमें रक्तके आंसू टपकाता हुआ गया है, देखो, वालुकामयी भूमिपर रक्तकी बूंदें ज्यौंकी त्यौं चमक रही हैं. (निकट जाकर) हो हो हो!!! मुझको भ्रम हुआ! यह मित्रके आंसुओंकी बूंदें नहीं हैं, यह तो बीर बहूटी हैं, हे विधाता! तू धैर्य दे देकर दुःख दिखाता है.

योगन०—महाराज! वियोगमें बुद्धि ठिकाने नहीं रहती! यह सब अपनेही पापोंका भोग है, न कोई किसीको दुःख देता है, न कोई किसीको सुख.

सुलोच०—क्या करूं, कैसे धैर्य धरूं, मित्रसे मिलनेका कोई उपायही नहीं बन पड़ता. देखो! वह बहुतसे हाथियोंका समूह शालके वृक्षोंके नीचे खड़ा है, मेरा जी चाहता है, इनके निकट जाकर पूँछूं, कदाचित् इनसेही कुछ पता लगजाय. (निकट जाकर) हे गजराज! प्रथम तो मैं यह पूँछता हूं, कि आप जो वारम्वार शरीरपर क्षार डालते हो, इसका क्या

कारण है ? दूसरी बात यह है कि, षोड़श वर्षकी अवस्था, मनोहर मूर्त्ति, कञ्चनवर्ण, योगियावेषवाला एक मित्र मेरा विछड़ गया है, तुमने कहीं देखा है ? सत्य है ! परमेश्वर किसीको मित्रका वियोगी न बनावे. हाय ! जो मैं मित्रका वियोगी न होता तो क्यों वन २ मारा २ फिरता. क्यों भाई ! उत्तर तो और वस्तु है, परन्तु मेरी बात भी नहीं सुनी, जब कोई तुम्हारा मित्र तुम्हारे नेत्रोंके ओट होजाता है, उस समय तुम किसप्रकार विरहित होकर पुकारते हो, यही तुम्हारे प्रेमकी तो यह दशा है कि, अपने प्रेमीका वियोग क्षणमात्रको भी नहीं सहन कर सकते; और जो मैं अपने मित्रके वियोगमें विकल हूं, तो मुझसे एक बात कहनेसे भी मुह छिपाते हो, यह तुम्हारी कैसी रीति है, तुम्हारा कुछ दोष नहीं, यह सब मेरे अभाग्यका प्रभाव है.

योगन०—महाराज ! आपका शरीर बहुत दुर्बल है, बहुत परिश्रम मत करो. आज इसी ठौर ठहरो, कलको फिर प्रातःकालसे ढूंढेंगे, अब मेरा चित्त भी चलनेको नहीं चाहता.

सुलोच०—जो आपकी इच्छा, मुझको तो किसी प्रकारसे निषेधही नहीं, परन्तु तुम कहो तो इन मृगोंसे और पूँछ लूं.

योगन०—बहुत आच्छा, कुछ सन्देह नहीं.

सुलोच०—देखो, इस काले हरिणकी शोभा कैसी मनोहर दिखाई देती है, मानो मनको मोल लियेलेती है और देखो! बसेरेमें जाती हुई मृगीको मृग छौनाने दूध पीनेके लिये मार्गमें रोक लिया है, उसको यह काला हरिण कैसा निहार २ देख रहा है.

राग कालिंगड़ा.

दया कछु तुमहीं करो मृगजाये ॥
जात हाथसे एक क्षणिकमें, सब गुण किये कराये ॥ १ ॥
सुन्दर रूप अनूप भूपवर, दिनकरवंश सुहाये ।
पुष्पवाटिका देखनके हित, प्रातकालके आये ॥ २ ॥
वन वन घूमत फिरत दिवसनिशि, सुन्दर रूप बनाये ।
तुम कहुं देखो हितू हमारो, तनपर भस्म रमाये ॥ ३ ॥
जन्म जन्म नहिं गुण भूलूं गो, विनय करत शिरनाये ।
उसी समय सब जानपरत हैं, अपने और पराये ॥ ४ ॥
तुमहिं बताय लेहु यश जगमें, किन मम मीत छिपाये ।
रोवत हूं दिनरात शीश धुनि, कर करकै पछिताये ॥५॥
अरे दई निर्दई हमारे, तैंने मान घटाये ।
मीतबिछोहा करिकै हमसे, सबके करजुरवाये ॥ ६ ॥
विरहवियोग शोक अरु चिन्ता, तन मन देत जराये ।
विरहव्यथा टारनके कारन, नयनन जल बरसाये ॥ ७ ॥
जो दुख स्वप्ने में नहिं देखे, सो दुख आज दिखाये ।
शालिग्राम मित्र हित सबके, करने पड़े मनाये ॥ ८ ॥

भाई ! शीघ्र उत्तर दो, तुमने मेरे मित्रको देखा है वा नहीं. क्योंजी मेरी बातका ऐसा अनादर कि, इस ओरसे दृष्टि भी फेरली. भाई ! तुम्हारा कुछ अपराध नहीं, जब विधाता वाम होता है तो सब ठौर अपमानही अपमान होता है

योगन०—महाराज ! अब रात्रिका समय हुआ, आज इसी स्थानपर विश्राम करो. प्रातःकाल उठकर फिर कहीं ढूंढ़ेंगे.

सुलोच०—हे योगन ! मेरी तो नींद, भूँख भी उड़ गई, इस विपत्तिमें यह पहाड़सी रात कैसे कटेगी ? अभीतक सुदर्शनका कहीं ठिकाना नहीं, पशुपक्षी अभिमानके मारे बोलते भी नहीं, मनुष्य कोई दृष्टि नहीं आता, क्या करूं, क्या न करूं, बैठे बिठाये परमेश्वरने आपत्तिमें डाल दिया.

योगन०--महाराज ! यह चन्द्रमा विरहीजनोंको भली भांति जानता है, क्यों कि, आकाशसे एक एक स्त्री पुरुषको देखता है, कोई वियोगी इससे छिपा न होगा, तुम इससे बूझो.

सुलोच०—योगनजी ! बात तो ठीक है, यह तुमने भला विचारा. (चन्द्रमाकी ओरको देखकर) हे निशिनाथ ! मेरे साथसे मेरा एक मित्र बिछड़ गया है, और सब सृष्टि आपको हस्तामलक है, कृपाकरके मेरे मित्रको बता दीजिये.

कवित्त.

अहो द्विजराज आज लाज है तिहारे हाथ मोहि तू सुदर्शनको दर्शन करायदे । जैसी है दृष्टि तेरी सृष्टि सब दि-

खाई देत ऐसीही मेरी दृष्टि दोदिनको बानाय दे॥ कै तो दि-
खादे कै दूरसे बतादे शीघ्र कै तो मोको प्यारेके ठौर पहुंचाय
दे। जीऊंगो जब लौं नाहिं भूलूं उपकार तेरो अबके तो बेड़ा
मेरा पारहू लगाय दे ॥ १ ॥

जो मेरी इस विपत्तिको निवारण करदोगे तो सदा तु-
म्हारे चरणोंका दास रहूंगा, क्यों महाराज बोलते नहीं,
मुझसे तो कोई ऐसा अपराध भी नहिं हुआ, ऐसा ज्ञात होता
है कि, आपको भी मृगोंने बहका दिया, कि, इस वियोगीसे
मत बोलना, अच्छा मत बोलो, जो कुछ परमेस्वरको करना
होगा सो होगा. हाय! दई इतना कोप! पशु पक्षीतक भी मेरे
वैरी होगये. (यह कह आंखोंमें आँसू भरकर रोने लगा).

योगन०—महाराज क्यौं रोते हो? धैर्य धरो, खोज-
नेसे तो परमेश्वर मिल जाते हैं. क्या सुदर्शन न मिलैगा!

सुलोच०—हे योगन, मेरी बात चन्द्रमा अन्यायीने
भी न सुनी, अपना रथ बेधड़क भगाये चला गया, यह
पापी किसीका मित्र नहीं. जो यह चकोरकाही न हुआ तो
और किसका होगा, जो रातदिन इसके स्नेहमें लौलीन है.

योगन०—महाराज! विपत्तिमें कोई किसीका नहीं होता.

सुलोच०—हे योगन! यह तारे हमारे सहायक हों
तो आश्चर्य नहीं, क्यों कि, यह बहुत हैं, किसीने तो देखाही
होगा.

योगन०—अच्छा महाराज! इनसे भी बूझ देखो

सुलोच०—अहो तारागण ! तुमने कहीं मेरे मित्र सुदर्शनको देखा हो तो बता दो, तुम्हारा जन्म २ गुण गाऊंगा. क्या तुम भी नहीं बोलते? सत्य है भाई ! तुम काहेको बोलोगे, तुम क्या चन्द्रमाके पास रहतेही नहीं हो, जैसा गुरु वैसे चेले.

योगन०—परमेश्वर किसीपर विपात्ति न डालै.

सुलोच०—हे योगन ! अब रात तो व्यतीत होही गई, अब सूर्य निकलनेका समय हो गया, उठो और कहीं ढूंढेंगे.

योगन०—बहुत अच्छा ! मैं प्रस्तुत हूं.

सुलोच०—(आगे बढ़कर) हे योगन ! यह कौनसा पहाड़ है ?

योगन०—महाराज ! यह विंध्याचल पर्वत है.

सुलोच०—इसकी कन्दरा तो बड़ी गम्भीर हैं, देखो यहां कैसा अन्धकार छा रहा है, अपना हाथतक भी नहीं सूझता, जो इस समय विजली चमकै तो कुछ दृष्टि आवै, हाय हाय यह सब मेरेही कर्मका फल है, जो ऐसी गम्भीर घटा छाई है, और विजली न चमकै तो दैवगतिसे असमर्थ हूं परन्तु जो चाहै सो हो, विना इस पहाड़की गुफाके देखे कदापि नहीं लौटूंगा.

योगन०—महाराज ? यह तो अंधियारी गुफा है, आप मेरा हाथ पकड़ लीजिये, कहीं मैं भी न विछड़ जाऊं.

सुलोच०—(दुःखित होकर) हे गिरिराज ! आज मेरी

लाज आपहीके हाथ है, क्योंकि प्रथम व्रजकी लाज भी आपहीने रक्खी थी. (शिखरपरसे शब्द सुनकर बहुत आनन्दित होके) धन्य है महाराज ! पूरा सो पूरा, और अधूरा सो अधूरा, महाराज ! आपको परमेश्वरने पूरा बनाया है, आपने मेरी बातका उत्तर तो दिया, दैवयोगसे कार्य भी होही जायगा, सुन्दर स्वरूपवान, किशोर अवस्था, योगिया वस्त्र पहने, एक मेरा मित्र बिछड़ गया है, आपको सबसे अधिक ऊँचा परमेश्वरने बनाया है, जहांतक आपकी दृष्टि पहुंचे देखकर, मेरे मित्रका पता बता दीजिये; कि कौनसे वनान्तरमें है ? (प्रतिध्वनिकी आहट सुन अत्यानन्द होकर) महाराज ! क्या आप यह कहते हैं, कि हमने देखा, सो कृपाकर यह कहो, कि, आपने कहां देखा ?

योगन०—महाराज ! आप किससे बातें कर रहे हो, यह तो आपहीके शब्दकी प्रतिध्वनि कन्दरासे सुनाई देती है.

सुलोच०—(इधर उधर देख कर) ओहो हो हो ! यह मेरे शब्दकी प्रतिध्वनि है, गिरिराजका शब्द नहीं. हा ! मैं ऐसा मूर्ख होगया, जो अपने और पराये शब्दको भी नहीं पहिचानता, अरे विधाता अन्यायी, तूने मुझको ऐसा अज्ञानी बनादिया जो अपने परायेतकका भी ज्ञान न रहा.

योगन०—महाराज ! अधिक शोक सन्ताप करनेसे

मनुष्यकी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती, अब यहांसे चलो, और कहीं चलकर ढूंढ़ेंगे !

सुलोच०—मेरा शरीर अब ऐसा शिथिल होगया है कि तिलभर भी पग नहीं उठाया जाता, और यह उत्तम स्थान भी है, और नदीका तट है, इसकी तरल तरंगें और मन्द मन्द सुगन्धित पवनकी झकोरैं, वियोगियोंको जलानेवाली हैं, परन्तु मेरे मनको ढाड़स बंधाती हैं, इसलिये अब तो मेरा जी यही चाहता है, कि जबतक मेरा मित्र न मिलै, तबतक इसी मनोहर नदीके निकट निवास करूं, और इनसे यह भी निश्चय होता है कि, मेरे मित्रने इनके हाथ कुछ सन्देशा भी भेजा है, सो सन्देशा कहनेको मेरे समीप आय २ झुक २ कर कुछ वार्तालाप करनेको उद्यत हैं.

योगन०—आपकी इच्छा है तो विश्राम लेलो.

सुलोच०—पहाड़के सोते और झरनोंसे जो शीतल स्वच्छ जल निकल २ नदीमें मिल रहा है, उसको देख २ मुझको आशा होती है कि, ऐसेही मेरा मित्र भी मुझसे मिल जायगा, और ज्यों ज्यों यह तिरछी आड़ी गतिसे इधर उधर बहती है, मानो मेरे मनको धैर्य देती है, और संकेत करती है, और इसके संकेतसे यह प्रगट होता है, कि, जैसे मैं इधर उधर घूम घाम कर तेरे निकट आती हूं, इसी प्रकार तेरा मित्र भी घूमघाम कर, तेरेपास आने चाहता है.

योगन०—महाराज ! ऐसे २ पहाड़ और नदियोंके

संकेतका तो कदापि विश्वास न करना, इस स्थानपर विश्राम करते २ तो बहुत दिन होगये, अब कहीं और ठौर चलकर सुदर्शनका अनुशरण कीजिये. यहां पड़े २ तो युग व्यतीत होजायँगे; पुरुषको चाहिये कि, अपने पुरुषार्थको न छोड़े.

सुलोच०—यह तो तुम्हारा वचन बहुत ठीक है! परन्तु मेरा शरीर ऐसा सिथिल हो गया है, मुझसे एक पगभरको भी चलना कठिन है, और तुम्हारी बातोंसे निश्चय होता है कि, मित्रसे मिलनेकी कोई चेष्टा नहीं, अब मुझको काष्ठभार ला दो तो मैं अपने शरीरको भस्म कर दूं, तो इस बारम्बारके कष्टसे छूट जाऊं.

योगन०—महाराज! आप अभीसे हारी २ बातें करने लगे, अभी देखाही कहां है; पचास करोड़ पृथ्वी ढूंढ़नेको पड़ी है, जिसमें अनेक वन, उपवन, नदी, नाले, पर्वत उपस्थित हैं.

सुलोच०—जहांतक हो सका अपने वसाते मैंने तो बहुतेरा ढूंढ़ा, अब मुझे चलनेकी सामर्थ्य नहीं. (काष्ठभार इकट्ठा कर अग्नि और पवनसे प्रार्थना करता है) हे अग्नि! शीघ्र मेरे शरीरको भस्म करदे. हे पवन! तू मेरी रक्षाको उड़ाकर, उस देशको लेजाना, जहां मेरा मित्र विराजमान है; उसके हृदयसे यह विभूति लगाकर कहना: तेरा मित्र कौ-

शिकी नदीके तीर जलकर भस्म होगया; और तेरे शरीरमें मलनेको यह खाख भेजी है.

योगन०—(चकित होकर) आपने तो यह चेष्टा की, मेरेलिये क्या आज्ञा है.

सुलोच०—परमात्माका भजन करो और सुदर्शनका अनुशरण रखना.

(सुलोचन चितामें बैठता है और अग्नि प्रज्वलित होती है और नेपथ्यसे एक महापुरुष निकलता है.)

महापुरु०—(उच्चस्वरसे) धैर्य धर, धैर्य धर. अरे मूर्ख ! क्यों अपना आत्मघात करता है, ऐसी तुझपर क्या भारी विपत्ति है, वर्णन कर. (हाथ पकड़ चितासे खैंचता है.)

सुलोच०—(दंडवत करके) क्या आप विधाता हैं ?

महापुरु०—विधाता तो ब्रह्मलोकमें विराजमान होंगे, मैं तो उनका एक दास हूं.

सुलोच०—क्या तुम मेरा मनोरथ पूरा कर सकते हो ?

महापुरु०—मनोरथ पूर्ण तो परमेश्वर करेगा, मेरी क्या सामर्थ्य है, परन्तु गुप्तभेदके बतानेवालेको और आगकी चिनगारीको थोड़ा मत समझना, तुझको अपने कामसे प्रयोजन.

सुलोच०—मेरा एक मित्र विछड़ गया है, जिसका यह विचित्र चित्र उपस्थित है.

महापुरु०—इस पर्वतकी चोटीपर एक महारमणीक

स्थान है, वहां एक दुर्मुखनाम राक्षस रहता है, वही तेरे मित्रको उड़ा लाया है, मैं वहां नित्यप्रति पूजाके निमित्त प्रसून लेने जाता हूं, वहां एक अत्यन्त सुन्दर कुसुमारण्य है, उसमें एक परममनोहर मन्दिर है, उस मन्दिरमें एक चौकीपर बैठा रहता है, और वह राक्षस दिनरात उसकी रक्षा करता रहता है, जब वह राक्षस उसके निकट नहीं होता है तो वह कभी २ यह दोहा पढ़ता है.

दोहा.

हरि चाही कछु औरही, मैं चाही कछु और ।
जान चहत प्रियके भवन, आन परो इहिं ठौर ॥

अब चार दिनसे मैंने उस राक्षसको वहां नहीं देखा, न जानिये क्या हुआ. वह अकेला बैठा कभी तो उसी दोहेको पढ़ता है, और कभी यह कहता है, हे विधाता ! मुझ अभागीपर इतना कोप ? प्रथम तो वह वैराग्य लगाया, और जब वनमें आया तो यह दुःख दिखाया, संगसे मेरे प्राणप्यारे मित्रको छुड़ाया, और जिसके कारण योगीका वेष बनाया, उस चित्तचोरको भी न पाया, और फिर रोने लगता है, न कभी अपना भेद उसने मुझसे कहा, और न मैंने उसका वृत्तान्त पूछा.

सुलोच०—(चरणोंमें शिर झुकाकर) महाराज ! यह लक्षण तो सब मेरे मित्रहीके विदित होते हैं, परन्तु यह तो कहिये, अवस्था क्या है ?

महापुरु०—सोलह वा पन्द्रह वर्षकी.

सुलोच०—ठीक है महाराज! वही है, अब कृपा करके मुझको अपनेसाथ ले चलिये, और जहां मेरा मित्र है उस स्थानपर मुझको पहुंचा दो.

महापुरु०—अच्छा, जब मैं पुष्प लेने जाऊंगा, तब तुझको अपने संग लेता चलूंगा.

सुलोच०—तो आप पुष्प लेने किस समय जाओगे.

महापुरु०—प्रातःकालही.

सुलोच०—तो मुझ वियोगीकी रात कैसी कटेगी ?

महापुरु०—जैसे अबतक धैर्य धरा है, उसीप्रकार और चार पहर व्यतीत कर, परमेश्वरने चाहा तो दिन निकलतेही उसका दर्शन करा दूंगा. (महापुरुष जाता है, और सुदर्शन फूला अंग नहीं समाता है और जवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका द्वितीयगर्भांकसमाप्त.

तृतीय भाग.

स्थान हेमकूटपर्वतका शिखर.

(सुदर्शन पुष्पारण्यमें चौकीपर उदास बैठा है और दुर्मुख राक्षस सेवामें खड़ा है.)

दुर्मुख—महाराज ! आप क्यों उदास हो ? और मुझ दासके लिये क्या आज्ञा है ?

सुदर्शन—चुप.

दुर्मुख—मैं चिरकालसे आपके दर्शनका अभिलाषी था, नित्यप्रति आपके नगरमें जाता, और इधर उधर घूमधामकर फिर आता, जब तुम्हारा दर्शन न पाता तो मनहीमन शोकाकुल हो रोता और शिर धुनता था, इसी अनुशरणमें वर्ष व्यतीत हो गये, जब मैंनें पता पाया कि, सुदर्शन और सुलोचन योगनके संग गये हैं, तो मैं अत्यानन्द हो आपके पीछे हुआ और अवसर पाय आपको उठा लाया, परमेश्वरने आज मेरा मनोरथ पूर्ण किया.

सुदर्शन—अरे दुष्टात्मा ! दुराचारी ! तेरा मनोरथ कदापि सिद्ध न होगा, तूने मेरा मनोरथ भंग किया है.

दुर्मुख—महाराज ! आपका क्या मनोरथ है मुझे आज्ञा दीजिये मैं अभी कर लाऊं.

सुदर्शन—मैं तेरी सहायतासे अपना मनोरथ पूर्ण करना नहीं चाहता. अरे अधम ! जो तू मेरा मनोरथ पूरा करना चाहता तो क्या मुझको यहां उठा लाता.

दुर्मुख—महाराज ! मेरा कुछ दोष नहीं, प्रेमने मेरे पीछे धूम मचा दी, बेवशहो निर्जन वनसे आपको लाया, दासका अपराध क्षमा कीजिये.

सुदर्शन—अरे खल ! पहिले तो छल, बल, कर मुझको यहां लाया; और दुःखमें दुःख और दूना दिखाया; अब क्षमा मांगता है, परमेश्वरकी यही इच्छा थी.

दुर्मुख—महाराज ! परमेश्वरकी इच्छा तो सर्वोपरि बलवान है, परन्तु दासका केवल यही मनोरथ है, एकवार आपकी मनोहर मूर्तिका दर्शन करलिया करूं.

सुदर्शन—अरे चाण्डाल तू हमारा दर्शनाभिलाषी बनता है, चला जा हमारे सन्मुखसे; हमको मुख मत दिखा, हमारे मित्रसे बिछोहा करा, हमको इस वनमें रखना चाहता है ?

दुर्मुख—जिस स्थानमें आपकी इच्छा हो वहां वास कीजिये और जिस वस्तुकी कांक्षा हो मैं उसी समय लाकर उपस्थित करूंगा. मैं तो सबप्रकार आपका आज्ञाकारी हूं.

सुदर्शन—अरे पापी ! तू बकवाद किये जाता है, हमारे आगेसे हटता नहीं, हम प्रेमी लोगोंको किस बातकी इच्छा.

दुर्मुख—आप दुःखी मत हो, मैं जाता हूं.

सुदर्शन—(अकेला बैठके आपहीआप) हाय ! मुझविन सुलोचनको कैसे कल पड़ती होगी, जिसने मेरे पीछे योगीका वेष बनाया, अपना घरवार छोड़ दिया, मेरेसंग वन वन मारा २ फिरा, सहस्रों कष्ट उठाये, अब अकेला किसको मित्र २ कहता होगा ? हे प्यारे ! जो क्षणमात्रको भी मैं बिलग हो जाता था, तो तू घर घर अनुशरण करता फिरता था, अब तेरी क्या गति होगी, उस योगनके संग अब कौन जायगा ? हाय प्यारे अब कैसे मिलना होगा ? और लावण्यवतीसे मुझे कौन मिलावेगा ?

दोहा.

प्यारे एक दिन वे हते, बिच न सुहाते हार ।
वायु जु कोऊ फिर गई, अब बिच परे पहार ॥ १ ॥
कहा करूं करतारको, पर नहिं देत लगाय ।
जो मैं अपने मित्रसों, उड़कर मिलता जाय ॥ २ ॥
मैं चाही कछु औरही, प्रभु चाही कछु और ।
जान चहत प्रियके भवन, आन परो इहि ठौर ॥ ३ ॥
कहा बात सोची हती, कहा कीन्ह करतार ।
सो नहिं काहूसों टरत, जो कुछ लिखो लिलार ॥ ४ ॥

अरे विधाता ! तूने आपने मनका चेता तो किया, परन्तु इतना कहा मेरा करना, सुलोचनको किसी प्रकारका कष्ट न हो, और जो योगनको किसी भांतिका दुःख हुआ तो मैं उसके सन्मुख मुख दिखाने योग्य न रहूंगा; मुझे अपने दुख सुखका कुछ नहीं, परन्तु मेरे मित्रोंको दुख न हो. हे प्यारी लावण्यवती ! अब तुझसे मिलना भी महाकठिन होगया, क्योंकि, एकतनका मित्र था सो भी छूट गया, योगनसे विछोहा हो गया, मैं इस बन्धनमें फँसगया, अब कौन ऐसा मित्र है, जो तेरा दर्शन करावे और तनकी तपन बुझावे. हाय ! इस विधाता निर्दईने सब आशा निष्फल कर दी.

दोहा.

प्रिया छुटी योगन छुटी, छुटो सुलोचन मीत ।
भूंख प्यास निद्रा छुटी, छुटी न प्रेम प्रतीत ॥ २ ॥

(एक शुक और सारिका तरुवरपर बैठी है, इसके विलापकलाप सुन रहे थे.)

शुक—मैना ! यह कोई विरही जन है, इसपर कोई बड़ी भारी विपत्ति है, जो यह ठण्ढे स्वास भर २ हाय हाय २ कर रहा है, ज्ञात होता है कि, इसका कोई मित्र बिछड़ गया है.

मैना—ऐसाही एक वियोगी बनमें मिला था, जो नदीके तीर पक्षियोंसे बूझता फिरता था, कि किसीने मेरे मित्रको देखा हो तो बता दो.

शुक—उसके संग एक स्त्री तो बोलने बतलानेको थी, इसके निकट तो एक पक्षीतक भी दृष्टि नहीं आता.

मैना—प्रेमी लोगोंकी ऐसेही कुगति होती है.

शुक—आपकी बात सत्य है ! प्रेमका परिणामही बुरा है, इसने सहस्रों मनुष्योंको नाश कर दिया.

सुदर्शन—(आपहीआप) यह कौन पक्षी है ? जो प्रेमकी निन्दा कर रहा है, (शुकसे) कुछ मेरा भी आपसे निवेदन है.

शुक—कहिये ! जो कुछ आपकी इच्छा हो.

सुदर्शन—आपने उस वियोगीको और योगनको कहां देखा था ! और उसकी क्या दशा थी ?

शुक—दोनोंके नेत्रोंसे जलधारा बही चली जाती थी,

और हाय सुदर्शन हाय सुदर्शन पुकारते फिरते थे, और कभी पक्षियोंसे और कभी पहाड़ोंसे बूझते थे कि तुमने कहीं हमारे मित्रको भी देखा है, और कभी कहता था "हे योगन! मेरे लिये काष्ठ इकट्ठा करदे, तो मैं अपने शरीरको भस्म कर दूं. अब मुझे मित्रसे मिलनेकी आशा नहीं रही;" और कभी कभी यह दोहा पढ़ता था.

दोहा.

तात मात भ्राता छुटे, एक मित्रके काज।
कहा करौं कासों कहों, सोऊ छूट गयो आज ॥

योगन बारम्बार समझाती थी और धैर्य बंधाती थी "जबलों स्वास! तबलों आस" जो शरीरकी कुशलता है, तो न जानिये कब समागम होजाय, और जो देहही नहीं तो फिर क्या?

सुदर्शन—फिर क्या हुआ?

शुक—नींद, भूँख जाती रही थी; मुखसे पूरा शब्द नहीं निकलता था, तन ऐसा कृश हो गया था कि, स्वास लेनेतककी सामर्थ्य नहीं थी.

सुदर्शन—क्या उनका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया था?

शुक—रक्तमांसका तो नाम भी नहीं था, केवल अस्थिही दिखाई देते थे.

सुदर्शन—(नेत्रोंमें नीर भरकर) हा मित्र ! हा मित्र !!

शुक—क्या उन्हींके वियोगमें तुम्हारी यह दशा है.

सुदर्शन—हां भाई ! वह मेरेही मित्र हैं.

शुक—फिर तुमसे कैसे विछोहा होगया.

सुदर्शन—मैं उनका संग छोड़ कुसुमारण्यकी शोभा देखने गया था, वहांसे एक राक्षस मुझे उठा लाया और इस बन्धनागारमें डाल दिया है, देखिये किस दिन परमेश्वर बन्धनसे मोक्ष करे.

शुक—परमेश्वरको सब सामर्थ्य है.

सुदर्शन—भाई ! ऐसा भी कोई उपाय है जो मित्रसे मिलाप हो जाय.

शुक—तुम्हारा समाचार तो मैं पहुंचा सकता हूं, और अधिक मेरा वश नहीं, मिलना न मिलना परमेश्वरके हाथ है.

सुदर्शन—अच्छा भाई ! शीघ्र जाकर वृत्तान्त तो सुनाओ, जो उनके मनको धैर्य हो, और एक पत्री आपके कंठमें बांधे देता हूं. यह उनको दे देना.

शुक—बहुत अच्छा. (शुक और सारिका जाते हैं और जवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननाम नाटकका तृतीयगर्भांक समाप्त.

चतुर्थगर्भाङ्क.

स्थान रनिवास.

(नगरमें कोलाहल मच रहा है और सब नगरनिवासी हाहाकार कर रहे हैं.)

द्वारपा०—भाई तुम विषण्णवदन कैसे हो रहे हो ?

दूत—क्या कहूं ! बड़े शोकका विषय है, तुमने नहीं सुना !

द्वार०—मुझे कुछ ज्ञात नहीं, कहो तो ?

दूत०—हाय ! मेरे मुखसे तो ऐसा कठोर वाक्य निकलही नहीं सकता.

द्वारपा०—क्या हुआ, बात तो कहो.

दूत—आज राजकुमार सुदर्शन, और मंत्रीका पुत्र सुलोचन, योगी होकर, वनको चले गये.

द्वारपा०—क्यों योगी होगये ? भाई यह तो बहुत बुरा हुआ, सुनकर हमारा तो कलेजा धधकने लगा.

दूत—एक योगन कहींसे आई थी, उसकी वीणा सुन सुदर्शन मोहित हो गया.

द्वारपा०—भाई ऐसी कैसी वीणा थी ? जिसको सुनकर राजकुमार मोहित हो गया.

दूत—ऐसा विदित होता है कि कुछ मोहिनी डाल दी,

वा किसी सुन्दरीकी प्रशंसा की होगी, वा कोई चित्रपटी दिखा दी होगी.

द्वारपा०—यह तो मुझको भी विश्वास है; जो मोहनी न डालती तो राजकुमार कैसे मोहित हो जाता ?

दूत—राजाओंके पुत्र तनकसी बातमें मोहित हो जाते हैं.

द्वारपा०—सत्य है भाई ! किसी सुन्दरीहीकी प्रशंसा करके योगन राजकुमारको ठगकर लेगई.

दूत—हाय ! जब राजा विजयसिंह सुनेंगे तो कैसा भारी शोक होगा.

द्वारपा०—पुत्रसे बढ़कर जगतमें और कौनसा शोक है ! पुरुषको तो धैर्य भी होता है, परन्तु यह व्यवस्था रानी सुनेगी तो उनकी क्या दशा होगी ? जो क्षणभर भी पुत्रका मुख न देखती थी, तो व्याकुल हो मीनकी भांति तड़फने लगती थी, मेरे ध्यानमें आता है, अब उनका जीना भी कठिन है.

दूत—भाई ! पुत्रके शोकका धीर पुरुषको भी नहीं होता, देखो ! रामलक्ष्मणके बनको गमन करतेही, राजा दशरथने प्राण त्यागदिये थे.

द्वारपा०—यह बात सत्य है ! परन्तु एक पिता हिरण्यकश्यप भी तो था, जो प्रह्लादको अग्निमें जलानेकी चेष्टा की थी, और उसकी माता भी देखती रही.

दूत—उसकी क्या कथा है, वह तो दैत्य था, जो न करै सो थोड़ा, कोई मनुष्योंका इतिहास वर्णन करो.

द्वारपा०—अच्छा भाई ! उसको जाने दो, गान्धारीके सौ पुत्र मरगये, और वह न मरी; कुन्तीके पाँचो पुत्र वनको चलेगये तो क्या वह मरगई.

दूत—वह तो माता पिता हैं, सब नगरमें भयानक हो-रहा है, और घर घर भूत लोट रहे हैं, पशुपक्षियोंतकने पानी नहीं पिया, मनुष्योंकी तो जाने क्या दशा होगी; विधाता विपत्ति किसीपर न डाले; और पुत्रके शोककी अग्नि तो महाप्रबल है, क्षणमात्रमें जलाकर वंशकी क्षार करदेती है.

द्वारपा०—(हाथ जोड़कर) महाराज ! दूत आता है.

विजय०—आने दो.

दूत—(नेत्रोंमें जल भरकर) महाराज !

विजय०— अरे दूत ! आज तू क्यों उदास हो रहा है?

दूत—महाराज ! आज सर्वनाश होगया, अनाश्रित आकाशसे वज्र टूट पड़ा.

विजय०—(अचानक चौंक कर) क्या आश्चर्य हुआ ! बता तो सही.

दूत—क्याकहूं, कुछ कहनेके योग्य नहीं.

विजय०—विना कहे कैसे विदित हो !

दूत—महाराज ! आज राजकुमार सुदर्शन योगी हो-कर कहींको चलेगये, और मंत्रीका पुत्र सुलोचन उनके संग

विजय०—(शिरमें कराघात कर) हा पुत्र आज्ञाकारी ! हा प्राणाधार ! ! हा जीवन ! (मूर्छित हो अवनिपर गिरपड़ा.)

दूत—सावधान हो ! सावधान हो ! हम लोग सुदर्शनको शीघ्र खोजकर लावेंगे घबरानेसे काम नहीं चलैगा.

विजय०—(सचेत हो) अरे कोई मंत्रीको बुलाओ, और देश देशको धावन भेजो, जहां कहीं पता लगै, उसी समय हमको समाचार दो (आपहीआप) हा पुत्र ! इस राज्यका भार अब कौन संभालैगा, हमारी ओरसे ऐसा निष्ठुर निर्मोही बनगया, जो चलते समय बात भी न की, कहां मेरी आज्ञाविना कोई काम न करता था, आज क्षणमात्रमें तृणसमान रीति प्रीतिको तोड़, मेरी ओरसे मुख मोड़, चलदिया, हे पुत्र ! थोड़ीही अवस्थामें ऐसा, सुख क्या विछड़नेहीके लिये दिखाये थे ! शत्रुओंके दलके दल पराजय कर, प्रजाओंको अनेक अनेक प्रकारके सुख दिखाये, मेरी सेवामें किसी भांतिका परेखा न किया, धिकार है मेरे जीवनपर ! जो बेटा योगी होजाय और मैं राज्य करूं.

मंत्री—महाराज ! आप तो सबको घबराये देते हैं.

विजय०—हाय ! मैं कैसे धैर्य धारण करूं? मेरा इकलौता पुत्र योगी होगया, हे पुत्र ! मुझको बुढ़ापेमें यह दुःख दिखाया ! इस बुढ़ापेके लिये एक पुत्र उत्पन्न किया था, उसको भी विधाता अन्यायी न देख सका. (मूर्छित हो गिरगया; और हाहाकार मचने लगा.)

मालती०—अरी मदनलता ! देख तो मन्दिरमें कैसा कोलाहल है.

(मदनलता मंदिरमें जाकर रोती पीटती आई.)

मदनल०—हाय हाय! आज तो बड़ा अन्याय होगया.

मालती—(चकित होकर) क्या हुआ !

मदनल०—हमलोगोंका अभाग्य.

मालती—अरी ! कुशल तो है.

मदनल०—कुशल तो है ! परन्तु क्या कुशल है.

मालती—मुंहसे तो कह क्या बात है.

मदनल०—आज राजकुमार सुदर्शन तो योगी हो गया, और राजा मूर्छित पड़े हैं.

मालती—हा पुत्र ! हा पुत्र ! हा प्राणाधार ! हा मेरे नेत्रोंके तारे ! क्या समाचार सुननेको थी और क्या सुना; हाय ! बेटा तुझको योगीही बनानेके कारण, (अंगुलोंसे नापनापकर) इतना बड़ा किया था; इसीलिये दूध पिला पिलाकर पाला था; परमेश्वर मुझको मृत्यु क्यों नहीं देता ?

मदनल०—धैर्य धरो, धैर्य धरो ! सुदर्शनके ढूंढ़नेको बहुत लोग गये हैं.

मालती—अरी वह कौनसा दिन होगा, जो मैं अपने लालको हृदयसे लगाऊंगी. अरे दई निर्दई विश्वास घाती ! तेरे हृदयमें भी दयाका नाम न रहा; जो मेरे ऐश्व-

येको न देखसका, और मेरे पुत्रको योगी बनानेकी अनु-मति दी.

मदनल०—अरी ! दैवका क्या दोष है ? अपनेही भाग्यका टोटा है.

मालती—हे लाल ! तुझबिन मैं कैसे रहूंगी ? हे बेटा ! जो तुझको योगीही बनना था, तो पहिलेही एक खड्ग लेकर मुझको मार डालता, तो यह दुःख मुझ दुखियाको काहेको देखना पड़ता ? जो अब छातीपर सांपसा लोट रहा है, अब मैं धरतीकी रही न आकाशकी; हाय ! मुझे चौपटमें पटका-

(मूर्छित हो पृथ्वीपर गिरगई, उसीमें सुदर्शनकी बहन शीलवती आई.)

शीलवती—हाय वीरन ! तुम भी बनको गये; और माता पिताके भी जीनेकी आशा दृष्टि नहीं आती, अब मैं अभागिनि अकेली किसके आश्रय रहूं.

राग जोगिया.

हाय कैसा गजब आज आया,
बीर योगी हो बनको सिधाया ।
अब मैं कैसे करूं मेरी दइया,
आज योगी हुआ मेरा भइया ॥
हाय कैसे जिये मेरी मइया,
जिसने ले देके एक पूत पाया ॥ १ ॥
मिटगई मेरी तीजो दिवाली,
न्यौरतेमें धरूं किसके बाली ।

मेरी सब ऋतु धनीने उठाली,
इस दशहरेने मुझको जलाया ॥ २ ॥
वह नवीन वीरकी है विहूनी,
वीरनबिन सारी नगरी है सूनी,
आग तनमें लगै दूनी दूनी,
हाय वीरन यह क्या दुख दिखाया ॥ ३ ॥
भैयाबिन रहके मैं क्या करूंगी,
हाय यह कष्ट कैसे भरूंगी।
मैं अभी जहरविष खा मरूंगी,
अब एही मेरे मनमें समाया ॥ ४ ॥
इतनी व्याकुल न हो धीर धर तू,
मति जहर और विष खाके मर तू।
और दोचार दिन सब्र कर तू,
तेरे वीरनको हमने बुलाया ॥ ५ ॥
जो मैं वीरनको ना देखलूंगी,
तो कभी मैं न जीती रहूंगी।
अपना दुख सुख मैं किससे कहूंगी,
वीर तो दूर देशोंमें छाया ॥ ६ ॥

वीरन तो जोगी होगये! अब मैं कजरी तीजके दिन झूलेपर बैठकर किसका नाम लेकर गीत गाऊंगी? अरी! मुझे यह तो बतादो, पायतेको मेरे वीरनके न्यौरते कौन रक्खैगा? और यमद्वितीयाको भैया भोजन किसके हाथका करैंगे?

हाय ! भैयाने यह न विचारा? और मुझ भगिनी अभागिनीको अकेली छोड़कर चलदिये. हे वीरन ! यह न सोचा ! सर्वत्र वस्तु संसारमें वारंवार मिलती है; परन्तु सहोदर भ्राता नहीं मिलता.

पद्मगंधा—हे राजकुमारी ! घवराय मत, तेरे वीरनके खोजनेको वहुत धावन गये हैं.

शीलवती—अरी ! तुम क्या कहतीहो, मुझको तो भैयाविना सब घर अंधेराही अंधेरा दृष्टि आता है, मेरे लेखे तो सब संसार सूना होगया; जो दो चार भ्राता भी होते तो थोड़ा वहुत मनको धैर्य बंधता, परमेश्वरने ले देके तो एक इकलौता भैया दिया, उसको भी विधाता वैरी न देख सका.

पद्मगंधा—अरी विधाता ! बिचारेका क्या दोष है, सब अपनेही भाग्यका दोष है.

शीलवती—अब मुझसे यह दुःख नहीं देखा जाता, माता पिता मूर्छित पड़े हैं, भ्राताविन भवनमें भूतसे लोटरहे हैं, इन दुःखोंसे तो परमेश्वर मेरे प्राण ले ले तो अच्छा है, परन्तु मुझ अभागिनीके भागकी मृत्यु भी कहीं चली गई.

पद्मगंधा—अरी ! जब मृत्यु आती है तो क्या किसीसे रुकती है; तू वृथा रो रोकर क्यों आँखैं लाल करै है; मैं किसीभांति न किसी भांति तेरे वीरनको मिलादूंगी, तू घबराय मत.

शीलवती—अरी मैं तो बहुतेरा मनको समझाऊं,